

जीवन के पहले बीस वर्ष मध्यप्रदेश में ही बीते। मुझे विश्वास है कि बचपन युवावस्था में ही पूरी जिन्दगी बसी मिलती है, अन्य दान की तरह। बाद में हमें अपनी निजी शक्तियों से आगे बढ़ना पड़ता है, पर सौचा नहीं बदलता। इस समय के बारे में जब भी सोचता हूँ, तीन विशेष स्थियाँ उभर आती हैं : परिवार, धरती और शिक्षक।

घर का वातावरण पवित्र और (तब) समय था। माँ का प्यार, अब्बा की तालीम, बचपन में मुझे जो हिदायत और तहजीब मिली, उस पर मुझे बाज़ है। पिता धार्मिक थे ज़रूर, पर कट्टर किस्म के नहीं। सत्य, सिद्धान्त और अनुसंधान पसन्द। उन संरक्षक होने के कारण ही हमारा सारा बचपन मध्यप्रदेश के जंगलों में ही बीता। नरसिंहपुर, मंडला, सिवनी, चाँदा और दुमोह। पहली स्मृतियाँ कान्हा किसली की ही हैं। पहाड़, सुन्दर वृक्ष, नदियाँ। आम और इमली के पेड़। पक्षी और जानवर : मोर, चैना, गाय, हाथी, बन्दर। बारिश में केंचुए, रात में साँप। बाद में, कभी कभी चीतल, तिल्लुए और शेर भी बलंग आया, ऊँची दीवारों के पार कर घर आजाते। एक सरक्षित थे, क्षति तो कभी न हुई, पर डर बहुत लगता था।

बिना जाने, इसी समय ही प्राकृतिक सौन्दर्य का छद्म मिले। धरती की समस्याएँ सामने थीं। रात और दिन, मौसम, गर्मी, बारिश। एक ओर बन्जर रेन्ज, और दूसरी ओर कान्हा किसली के सुन्दर वन। हमारे गाँव, मिट्टी से बने हुए घर, लाल खपर, चूने से पुती सफ़ेद दीवारें, मूर्ति और मन्दिर, रविवार के मेले, किसान और हल, अधिवासियों के वृत्त-संगीत ये सब आज भी एक चित्र वीथी की तरह आँखों पर प्रकट हो जाते हैं। पहले मोती नाला, कि बाद में मंडला में ही, घर के पास बग्घा था, एक नैसर्गिक शक्ति की तरह। अयंकर पूरा आते थे, और फिर शान्त दिनों में हम पुराने किले के पास घाटों पर जाते थे। नदी सुख-शान्ति से बहती थी, चार सुन्दर और रहस्यमय थे।



इन्हीं दिनों अन्धकार ही नहीं, एक कठोर बेचैनी का अहसास था। अस्तव्यस्ता कुछ ऐसी थी कि शाला में मन ही नहीं लगता। आग्य से बकैया गोंव में प्रायगरी शाला के शिक्षक श्री पंडित नन्दलाल जी ने मेरे भटकते हुए मन को एक "बिन्दु" पर केन्द्रित किया। उस समय इस पाठ की महत्वता को पूरी तरह से न समझ सका। फिर भी तब से अब तक यही "बिन्दु" एक ध्रुव तारे की तरह राह बताता रहा है।

पढ़ाई के लिये, हम जंगलों से विदा लेकर, दमोह आये। यहाँ माँ का पूरा परिवार था और इसी सनेहमय सात्विक वातावरण में किशोरावस्था बीती। यहीं मुझे गिला नया संस्कार, नया प्रवेश, सहज और पवित्र हिन्दू पृष्ठभूमि। इसका श्रेय मैं अपने शिक्षकों को ही दूँगा। सबसे पहले स्वर्गीय वेनी प्रसाद जी स्थापक को, जिनकी कृपा से प्रथम पाठ "बिन्दु" की समझ मिली और एकाग्रता बढ़ी। इन्होंने मुझे दिया शाला से प्रेम, जीवन में उत्साह और प्रकाश। इनके शब्दों में जादू था, आवाज़ में संगीत, इनका जीवन हमारे लिये एक उदाहरण था। धार्मिक मनोवृत्ति, सत्य विचार, स्वस्थ शरीर, स्वच्छ कपड़े, संकल्प, उत्साह, शाला और विद्यार्थियों का प्रेम, यही इनका जीवन था। वे हिमालय पर जाते थे, किसी आश्रम में अपने गुरु से मिलने, और लौटकर ऊँच कहानियाँ और श्लोक सुनाते थे। दमोह के शोरव, गुरुवार स्थापक जी, आज भी सैकड़ों छात्रों की स्थियों में अंगूर हैं।

कुछ समय बाद, प्रोत्साहन दमोह हाई स्कूल में ही मिला। मैं कई विषयों में कमजोर था। हमारे ट्राइंग टीचर श्री दर्याव सिंह जी राठौर ने कला में रुचि जगाई। इन्हीं के कारण ही, एक साधारण विद्यार्थी को अहसास हुआ कि शायद उसकी निम्नी शक्तियाँ, मायकता, बेचैनी दूसरे क्षेत्रों में उपयुक्त हो सकती हैं। रंगों और रेखाओं की सुन्दरता, कलम, उंगलियों और दृष्टि का सम्बन्ध, अवलोकन प्रमाण, रेखागणित पहली बार, इन्होंने ही बड़ी सरलता से समझाया। उस रोशनी में चित्र कला की पहली पहचान, रंगों की समझ मिली, आत्म विश्वास बढ़ा।

हमारे ऐतिहासिक संस्कार नगर दमोह ने भी अपने वयस्क विद्यार्थियों के उत्साह को समझा और पूरी तरह निभाया। हम कई प्रणयों से प्रभावित थे। जवानों